अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 03, (July-Sep 2025)

योगी के त्याग पूर्वक वेदोक्त जीवन का स्वरूप

रिंकू ; एम.ए. योग विज्ञानद्ध
उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार।
E-mail - rinkupypt@gmail.com

Dr. Pramod Kumar Vice Principal Cum Lecturer
Mahrishi Dayanad Medical Science and Research Institute Haridwar
E mail- pdhinka@gmail.com

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष त्यागी तपस्वी योगी,)षिमुनियों का देश रहा है, सम्पूर्ण विश्व में भारत वर्ष इसीलिए विश्वगुरु रहा है। क्योंकि यहाँ जो ज्ञानी, ध्यानी विद्वान् महापुरुष अपने जीवन को निष्काम भाव से वेदोक्त शास्त्रोक्त कर्मों को करते हुए सदैव **मनसा वाचा कमणा सर्वभूतहितरत्** होकर व्यष्टि से समष्टि के कल्याण के लिए सब कुछ समर्पित कर देते हैं। योगी की समस्त दुर्गुण, दुर्व्यसन, दुर्व्यवहार, दुराचार, दुर्गति, अभाव अविद्या, अन्ध्कार, अन्याय अर्ध्म, अज्ञान से भी मुक्ति होती है। तथा सत्यपूर्ण, समग्र, सन्तुलित, संयमित, मर्यादित, अहिंसक, न्यायपूर्ण जीवन होता है। योगी की कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं होता। वे विकट से विकट संकट में कभी विचलित नहीं होते, आत्मनोन्नति व राष्ट्रोन्नति के लिए अहर्निश निष्काम कर्म में लगे रहते हैं। यही योगियों की विशेषता है कि अपने लिए कुछ नहीं चाहिए पिफर भी संसार की भलाई के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देते हैं। यही उपनिषदों का उपदेश, आदेश संदेश है कि सच्चे योगी बनकर के त्यागपूर्वक वेदानुकूल कर्म करें। इसी बात का उपदेश ईशोपनिषद् के दूसरे उपदेश में दिया गया है। जिसमें वेदोक्त कर्मों को करते हुए सौ वर्ष तक जीने का उपदेश दिया है–

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः। एवं त्वयि नान्यथेतो{स्ति न कर्म लिप्यते नरे।।
[1]

तो इस प्रकार अपने कर्मों को निर्लेप भाव से करते हुए ही व्यक्ति दुःखों से बच सकता है, इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

योगी द्वारा किये गये सारे कर्म पूजा करने के समान है। संसार में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं जो कर्म के बिना रह सकें, अतः योगी कर्म करता भी है तो योग युक्त होकर निष्काम भाव, ब्रह्मभाव से युक्त होकर।

कुछ ऐसे ही भावों को गीता के श्लोकों द्वारा प्रकट किया गया है–

यागयुक्तो विशु(ात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः। सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वÁपि न लिप्यते।।[2]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 03, (July-Sep 2025)

ब्रह्मण्याधय कर्माणि सघ्गं त्यक्त्वा करोति यः।लिप्यते न स पापेन पद्यपत्रामिवाम्भसा।।[3]

कायेन मनसा बु(या केवलैरिन्द्रियैरपि। योगिनः कर्म कुर्वन्ति सघ्गं त्यक्त्वात्मशु(ये।।[4]

कर्मयोगी अहंकार–बु(का त्याग करके केवल शरीर से, केवल मन से और केवल इन्द्रियों से भी आसत्तिफरहित होकर आत्मशु(के लिए कर्म को किया करते है। यदि सभी कर्म अहंकार–रहित समत्वबु(से, ज्ञान के साथ किये जाएं तो वे बन्ध्न कारक नहीं होते। कर्म के विषय में वेदों का जो आदेश, उपदेश, निर्देश है योगी तदानुसार ही आचरण करता है। इन्ही वेदोक्त कर्मों के अनुष्ठान से ही सुख शान्ति मिल सकती है। योगियों का कर्म वेदानुकूल, आत्मानुकूल होने से आसक्ति रहित आनन्द से परिपूर्ण होता है।

योगी का जीवन अन्दर और बाहर से प्रदर्शन के लिए अपितु प्रभुदर्शन के लिए होता है, जैसा कि कहा गया है–

मनस्यन्यद् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद् दुरात्मनाम्। मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।।[5]

जो दुर्जन मनुष्य होते है उनके मन में कुछ और होता है, वाणी से कुछ और बोलतें है और शरीर से करते कुछ और ही है। किन्तु सज्जन मनुष्य के मन में जैसा होता है, वाणी से वैसा ही बोलते है, और वैसा ही शरीर से करते है।

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्दातीतो विमत्सरः। समः सि(ावसि(ौ च कृत्वापि न निबध्यते।।[6]

अर्थात् योगी जो प्राप्त हो जाए उसमें ही सन्तुष्ट, हर्ष–शोक, लाभ–हानि,जय–पराजय, निन्दा–प्रशंसा आदि द्वन्द्वों से मुक्त, कर्म की सि(वा असि(को समान मानने वाला, ईर्ष्या रहित कर्म करके भी उनके सुख–दुःख रूप पफलों से लिप्त नहीं होता है।

इन्द्रियाणां निरोध्ेन रागद्वेषक्षयेण च। अहिंसा च भूतानाममृतत्वाय कल्पते।।[7]

योगीजनों का यह परम कर्त्तव्य है कि इन्द्रियों को अध्र्माचरण से रोक, राग–द्वेष को छोड़, सब प्राणियों से निर्वैर वर्त्तकर मोक्ष के लिये सामर्थ्य बढ़ाया करे।

उसकी सांसारिक भोगेच्छाएं समाप्त हो जाती हैं। जैसा कि गीता में कहा गया है–

अनाश्रितः कर्मपफलं कार्यं कर्म करोति यः। स संन्यासो च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।।[8]

जो साध्क कर्मपफल का आश्रय न लेकर अपने विहित कर्तव्य कर्म में लगा रहता है। वही कर्मयोगी न कि निरग्नि या अक्रिय होकर निठल्ला बैठने वाला है। जो योगी होता है वह ईश्वर को हमेशा अपने अंग संग अनुभव करता हुआ कर्मों का सम्पादन करता है।

ब्रह्मैवेदममृतं, पुरस्ताद् ब्रह्म पश्चात् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण। अध्श्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्।।[9] 'सिया राम मैं सब जग जानी' 'जिध्र देखता हूं, उध्र तू ही तू है।'

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 03, (July-Sep 2025)

ईशा वास्यमिदृसर्वं यत्किχच जगत्यां जगत।।[10] योगी के सारे कर्म ब्रह्मार्पण होते हैं।

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाध्निा।।[11] अहं भाव को जिसने ब्रह्म में ही लीन कर दिया है। ऐसा योगी सर्वथा ब्राह्मी स्थिति को प्राप्त हो जाता है। वह योगी सांसारिक भोग भावनाओं, वासनाओं में नहीं बहता। सदैव जाग्रत रहता है– **या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी। यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः।।**[12]

जो सभी मनुष्यों के लिए निशा है, अर्थात् जिसके प्रति वे आँ॰ बन्द किए सोते रहते हैं– उसमें कोई ऋ योगी संयमी व्यत्तिफ ही जागता रहता है और जिस सांसारिकता की दौड़ में, विषयार्जन एवं उनके उपभोग में सभी मनुष्य जागृत सचेष्ट रहते हैं, वह यथार्थ को दे॰ने वाले मुनि व्यत्तिफ के लिए निशा है, वह उसकी और आँ॰ बन्द किए सोता रहता है ।

सब भूतों की जो रात है अर्थात् सारे भूत जिस विषय में सोए पड़े हैं, उसी विषय में संयमी जागता है अथवा दूसरे प्रकार से कहें तो जिस विषय में सब भूत जाग रहे हैं, उस विषय में ;ज्ञानीद्धसोया हुआ रहता है। समस्त अज्ञानी मनुष्य विषय–वासनाओं व ऐषणाओं की पूर्ति में तल्लीन हैं, दिन में जैसे अन्य सब प्राणी क्रियाशील रहते हैं, वैसे ही वे अज्ञानी मनुष्य भी सभी सांसारिक विषयों में क्रियाशील रहते हैं, किन्तु ज्ञानी के लिए यह सब रात है। वह इन सब से विरत्तफ व इन सब के प्रति निष्क्रिय है। समस्त भूत इन्द्रियनिग्रह व गहन ध्र्माचरण आदि में विरत व निष्क्रिय हैं अर्थात् इन विषयों में सोये पड़े हैं, ज्ञानी इन्हीं सब विषयों में जाग रहा होता है अर्थात् ज्ञानी के लिए यह दिन है और अज्ञानग्रस्त प्राणियों के लिए यह रात है। योगी के मन, वाणी व शरीर से वेदोक्त लोकोपकारक कर्मों का ही अनुष्ठान होता है। जिससे समस्त भूमण्डल कृतार्थ हो जाता है।

मनसि वचसि काये, पुण्यपीयूषपूर्णात् त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः परगुणपरमाणून्, पर्वतीकृत्य नित्यं, निजहृदि विकसन्तः, सन्ति सन्तः कियन्तः।।[13]

जिन्होंने अपने मन, वाणी तथा शरीर में पुण्य–कर्म रूपी अमृत भरा हुआ है। और जो अपने परोपकार के कर्मों से तीनों लोकों को तृप्त करते हैं। जो अन्यों के अल्प से भी गुणों को पर्वत के समान विशाल समझते। अपने हृदय प्रसन्न होते हैं ऐसे सत्पुरुष कितने हैं? अर्थात् कोई–कोई विरले ही हैं।

योगी कभी भी अविवेकपूर्ण कामनाओं को प्रश्रय नहीं देता, वह सदा विवेकपूर्ण कर्मों का संम्पादन अनासत्तफ भाव से करता है गीता के श्लोक से यह स्पष्ट है कि जो व्यत्तिफ स्थितप्रज्ञ है, सि(ावस्था को प्राप्त हो गया है, उसके लिए कर्म का त्याग आवश्यक नहीं है। उसे कर्मपफल की चाह त्यागकर अपना कर्त्तव्य तो निभाना ही है। कामना व पफल में आसत्तिफ से जो निर्लिप्त है, उसके चित्त की शान्ति नहीं डिगती है, समुद्र के समान वह शान्त बना रहता है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 03, (July-Sep 2025)

विहाय कामान्यः सर्वान् पुमांश्चरति निःस्पृहः। निर्ममो निरहघ्कारः स शान्तिमधिगच्छति।।[14]

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति। स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।[15]

जो व्यक्ति सब कामनाओं में आसक्ति छोड़कर और निःस्पृह होकर व्यवहार करता है एवं जिसे ममत्व और अहंकार नहीं होता, उसे ही शान्ति प्राप्त होती है। योगी सर्वथा ऐसे ही स्वभाव में रहता है। यही ब्राह्मी स्थिति है, इस स्थिति को प्राप्त करके व्यक्ति किसी प्रकार के मोह से प्रभावित नहीं होता अर्थात् मोह में नहीं पफंसता और अन्तकाल में भी इसी स्थिति में रहकर ब्रह्मनिर्वाण अर्थात् मुक्ति को पाता है। जो योगमय जीवन जीता है वह कर्म करते हुए भी उनमें आसक्तफ नहीं होता।

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः। छिन्नद्वैध यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः।।[16]

जिन योगियों की बुि(संशय रहित हो गई है अर्थात् ज्ञान से जिनके सब संशय निवृत्त हो गए हैं तथा जिन्होंने अपने आपको संयम में ढाल लिया है, जिनके पाप नष्ट हो गये हैं और जो सब प्राणियों का हित करने में लगे हुए हैं, ऐसे तत्त्ववेत्ता)षि ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार का त्याग व तपोमय वेदोक्त जीवन योगियों का होता है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 13-Issue 03, (July-Sep 2025)

Reference

[1] bZ'kksifu"kn~ 2

[2] Jhen~Hkxon~xhrk 5-7

[3] Jhen~Hkxon~xhrk 5-10

[4] Jhen~Hkxon~xhrk 5-11

[5] fgrksins'k 101

[6] Jhen~Hkxon~xhrk 4-22

[7] euqLe`fr -6-5

[8] Jhen~Hkxon~xhrk 6-1

[9] eq.Mdksifu"kn~-11-43

[10] bZ'kksifu"kn~-1

[11] Jhen~Hkxon~xhrk &4-24

[12] Jhen~Hkxon~xhrk&2-69

[13] uhfr'krde~& 79

[14] Jhen~Hkxon~xhrk 2-71

[15] Jhen~Hkxon~xhrk 2-72

[16] Jhen~Hkxon~xhrk 5-25